समीक्षा

समीक्षा एवं शोध त्रैमासिक

संयुक्तांक

जुलाई-दिसंबर, 2015

वर्ष 48, अंक 2-3

संस्थापक सम्पादक

गोपाल राय

सम्पादक

सत्यकाम

संयुक्त सम्पादक

अमिताभ राय

प्रबन्धन

सीमा

समीक्षा

ISSN : 2349-9354

जुलाई-दिसंबर, 2015

वर्ष: 48. अंक : 2-3

प्रकाशन तिथि : 15 दिसंबर, 2015

मूल्य :

एक प्रति: *तीस रुपये*

संस्थाओं के लिए : *पचास रुपये*

वार्षिक सदस्यता : *दो सौ रुपये (डाक खर्च सहित)*

संस्थाओं के लिए : *तीन सौ रुपये (डाक खर्च सहित)*

आजीवन सदस्यता : ***पांच हजार रुपये (डाक खर्च सहित)***

इस अंक का मूल्य:

व्यक्तिगत: साठ रुपये

संस्था: सौ रुपये

सम्पर्क:

समीक्षा

द्वारा *अमिताभ राय*

ए-305, प्रियदर्शिनी अपार्टमेन्ट,

17-इन्द्रप्रस्थ प्रसार,

पटपड़गंज, दिल्ली-110092

मोबाइल : 09582502101

ईमेल : sameekshatraimasik@gmail.com

निवेदन: कृपया सारे भुगतान केवल बैंक ड्राफ्ट अथवा ई-ट्रांसफर द्वारा निम्न चालू खाता संख्या: 2257002100004645. IFSC Code: PUNB0225700, पंजाब नेशनल बैंक, इग्नू, मैदानगढ़ी, दिल्ली-110068 में कीजिए। बैंक ड्राफ्ट 'समीक्षा' को नई दिल्ली में देय होगा। ड्राफ्ट उपरोक्त पते पर भेजें।

पत्रिका का अंक न मिलने पर इसकी सूचना उपरोक्त पते पर दें अथवा उपर्युक्त नं. पर सम्पर्क करें।

'समीक्षा' में प्रकाशित रचनाओं के विचारों से सम्पादक की सहमति आवश्यक नहीं है। सम्पादक, संयुक्त सम्पादक पूर्णतया अवैतनिक और अव्यावसायिक।

किसी भी विवाद की स्थिति में न्यायाधिकरण, दिल्ली होगा

केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा से सहयोग प्राप्त।

अनुक्रम

		पृ.सं.
सम्पादकीय : ये कौन **सा बयार है**		4
विशेष प्रस्तुतिः निर्वासन		6
बीच राह में यूँ खड़े रह जाने **की त्रासदी**	**आशुतोष**	7
पूँजीवादी व्यवस्था से **निर्वासित लोगों** का आख्यान	**जीतेन्द्र गुप्ता**	13
उपन्यास		
समाज का घेरा बहुत मजबूत **होता है (लौटना** नहीं **है)**	विनोद तिवारी	19
असहिष्णुता एवं क्रूरता के **संस्मरणात्मक** आख्यान **(काले अध्याय/ घास** का पुल)	**वीरेन्द्र सक्सेना**	25
एक विराट **ऐतिहासिक चरित्र** (आर्यभट)	**अरुण अभिषेक**	28
दो उपन्यास (हिडिम्बा और स्वांग)	सुधा **बाला**	32
फरिश्ते निकले	**जसविन्द्र कौर बिन्द्रा**	36
कहानी		
स्त्री संवेदन और **कथाओं** का संसार : तीन **स्त्रियों की कथाएँ (ये कथाएँ सुनाई जाती रहेंगी हमारे बाद भी/ स्त्री हूँ** इसीलिए/ ऊँची बोली)	हर्षबाला शर्मा	38
कहानीकार सूर्यबाला से वंदना शर्मा **की बातचीत**		41
स्मृतियों में सिरजता प्रेम (एक टुकड़ा कस्तूरी)	कला जोशी	48
सामाजिक परिवर्तनों के बीच बदलती मानवीय **संवदेनाओं** का एक बड़ा कोलाज (कसाब.गाँधी@**यरवदा.in)**	रिम्पी खिल्लन	52
कविता		
कविता का **समकाल** : **संदर्भ युवा रचनाशीलता (बेघर सपने/ वे तुमसे पूछेंगे डर** का रंग)	अरूण होता	55
समसामयिक समाज की विसंगतियाँ (इसलिए कहूँगी मैं)	**हेमराज कौशिक**	60
प्रकृति से स्पंदित होती कविताएँ (बर्फ हुआ आदमी)	**कुमार वरुण**	63
दार्शनिकता का स्पर्श देती दिविक **की** कविता **(माँ गाँव में है)**	प्रतिभा **मुदलियार**	67
सब जग सूना नींद भरि **संत** न आवै नींद **(साधो** : जग बौराना)	**पूनम** सिन्हा	69
स्त्री मन की बहुरंगी स्मृतियों का रसायन **(माँ** का जवान **चेहरा)**	**प्रभाकर** सिंह	71
आत्मकथा		
व्यक्ति से समाज पर केन्द्रित **होती प्रभावी आत्मकथा** (कितनी धूप **में कितनी** बार)	पुष्पपाल सिंह	74

मणिकर्णिका : मुरदहिया का बनारस-पर्व (मणिकर्णिका)	अवधेश प्रधान	77
दलित आत्मकथाएँ : पूर्वपाठ, पाठ, अन्तरपाठ (जूठन/ मेरा बचपन मेरे कन्धों पर/ शिकंजे का दर्द)	राजेन्द्र प्रसाद पाण्डेय	83
संस्मरण		
बरगद की याद (महागुरू मुक्तिबोध जुम्मा टैंक की सीढ़ियों पर)	गोपाल प्रधान	89
विमर्श		
आदिवासी दस्तक में विमर्श की तलाश (आदिवासी दस्तक : विचार, परम्परा और साहित्य)	सियाराम मीणा	91
भारतीय नारी विमर्श के प्रमुख स्वर (नारी विमर्श की भारतीय परम्परा)	सत्यप्रिय पाण्डेय	94
शोध		
सिद्धों की सहज शाखा की ऐतिहासिक पुनर्निर्मित (सहज सिद्ध : साधन विमर्श-खण्ड एक/ सहज सिद्ध: चर्यागीति विमर्श-खण्ड दो)	रमेश कुंतल मेघ	96
कुबेरनाथ राय: ललित्य के छप्पन स्वाद (हिन्दी निबंध साहित्य के परिदृश्य में कुबेरनाथ राय)	सुवास कुमार	101
भोजपुरी कविता की राष्ट्रीय प्रतिबद्धता (छवि और छाप)	बलराम तिवारी	103
आलोचना		
मुक्तिबोध साहित्य पर आधी-अधूरी बात (मुक्तिबोध साहित्य में नई प्रवृत्तियाँ)	नंद भारद्वाज	106
राग दरबारी : आलोचना की फांस	कृष्ण चंद्र लाल	110
राग दरबारी पर मुकम्मल नजर	धर्मा रावत	112
रचनाकार से संवाद (शब्द परस्पर)	मृत्युंजय उपाध्याय	116
व्यक्ति, समाज और इतिहास की अंतरंगत की पड़ताल (हरिशंकर परसाई के साहित्य में व्यक्ति, समाज और इतिहास)	अनिल राय	119
पुस्तक परिचय		
इश्क में शहर होना	जसविन्द्र कौर बिन्द्रा	122
पत्रिका		
पत्रिकाओं पर एक नजर	प्रणव कुमार ठाकुर	124

व्यक्ति, समाज और इतिहास की अंतरंगता की पड़ताल

अनिल राय

प्र. साहित्य भंडार
50, चाहचन्द्र, इलाहाबाद-211003
प्र.सं. 2015. पृ.सं. 136. मू. ₹ 50.00

स्वातंत्र्योत्तर युग के सर्वाधिक चर्चित एवं सशक्त साहित्यकारों में से एक हरिशंकर परसाई की चर्चा के बिना व्यंग्य साहित्य की चर्चा अधूरी है। ऐसा नहीं है कि इनका पूरा साहित्य ही व्यंग्य की चहारदीवारी में कैद है, बल्कि उससे बाहर निकलकर पढ़ने-समझने को एक पूरा सृजन-लोक विद्यमान है। उनके इसी सृजन-लोक से पाठकों को अवगत कराने की दिशा में एक महत्त्वपूर्ण कदम उठाया है लेखिका अमिता पांडेय ने, जिनकी पुस्तक 'हरिशंकर परसाई के साहित्य में व्यक्ति, समाज और इतिहास' हाल ही में प्रकाशित हुई है। पुस्तक की भूमिका में लेखिका ने स्पष्ट कर दिया है- "वस्तुत: यह पुस्तक व्यंग्य के घेरे से बाहर निकलकर परसाई-साहित्य को देखने का प्रयास है और यह प्रयास है यह समझने का कि परसाई-साहित्य में व्यक्ति अपनी समस्त क्रियाओं प्रतिक्रियाओं के साथ दर्ज है। अपनी बहुविध छवियों, संघर्षों प्रतिरोधों के साथ अपने समस्त सुख-दुख, छल-छद्म के कारण यहाँ व्यक्ति को पूरे समाज के बीच धड़कते-साँस लेते महसूस कर सकते हैं।"

परसाई को आधुनिक युग का इतना सशक्त और धारदार साहित्यकार बनाने में उनके जीवनानुभवों की एक बड़ी भूमिका रही है जिनका ब्यौरेवार उल्लेख विभिन्न प्रसंगों के माध्यम से इस पुस्तक में किया गया है। चार वर्ष की छोटी उम्र में शिक्षक द्वारा बार-बार 'क' से 'कमल' सिखाए जाने के बावजूद 'क' से 'कलम' कहने की ज़िद और सजास्वरूप बार-बार पिटाई की पीड़ा को झेलने की दृढ़ता में ही भावी परसाई के विद्रोह मनोवृत्ति के लक्षण साफ दिखाई दे गए थे। दु:ख की भट्टी में जलने-तपने का पहला अनुभव हुआ। माँ की मृत्यु के उपरांत एक रात में ही चौदह-पंद्रह वर्ष के किशोर को तीन बहनों एवं एक भाई का पिता बनने की जिम्मेदारी उठानी पड़ी। धार्मिक संस्कारों के बीच पलने वाले परसाई की धार्मिक आस्था दरकने लगी और ईश्वर से मोहभंग होने लगा। संघर्ष करने और उस पर विजय पाने की ज़िद परसाई के जीवन में यहीं से शुरू हुई। परसाई द्वारा स्वयं प्रस्तुत किए गए उन तमाम महत्त्वपूर्ण प्रसंगों को यहाँ लेखिका ने उद्धृत किया है जिससे उनके व्यक्तित्व और साहित्य को परत-दर-परत समझने की एक ठोस दृष्टि बनती है। उनके जीवन के ये प्रसंग चाहे कांति कुमार जैन द्वारा उल्लेखित हों या ज्ञानरंजन द्वारा लिए गए साक्षात्कार द्वारा उद्घाटित हुए हों, लेखिका ने उन सभी प्रसंगों/संस्मरणों की गहरी छानबीन की है, जिनके आलोक में परसाई को जानना-समझना आसान जो जाता है।

बचपन में नित्य रामचरितमानस का पाठ और इसका पूर्णतः कंठस्थीकरण, मिथकों-पुराणों में गंभीर रुचि, अध्ययनजन्य इतिहास-बोध और ज्ञान-विज्ञान से प्राप्त विश्लेषण क्षमता ने परसाई के व्यक्तिगत एवं सृजन को एक निस्सीम फलक प्रदान किया। मुक्तिबोध के संपर्क ने उन्हें मार्क्सवादी दर्शन और साहित्य से अवगत कराया जिसका उल्लेख लेखिका ने इस प्रकार किया है- ''मार्क्सवाद ने ही इन्हें वे टूल्स और वह नजर दी जिससे ये व्यक्ति व्यवस्था और उनके संबंधों के आर-पार देख पाते हैं।..... जड़ मार्क्सवाद उनके लिए किसी भी अन्य अमानवीय विचार की तरह ही था। उनके लिए विचार सिर्फ सिद्धांत नहीं व्यवहार था।' दरअसल परसाई पुस्तकें पढ़कर और भाषण सुनकर मार्क्सवाद के निकट नहीं आए थे, बल्कि जीवन के सत्त संघर्षों और यथार्थ से टकराते हुए यहाँ तक पहुँचे थे। यही कारण है कि उन्हें सिद्धांत झाड़ने वालों से एक खास किस्म की 'एलर्जी' थी।

परसाई की जीवन दृष्टि में मौजूद जिन मूल त्तवों की पड़ताल समीक्ष्य पुस्तक में की गई है उनमें उनकी अपने वर्तमान के प्रति गहरी संवेदनशीलता, अपने जीवन और साहित्य में आखिर तक बरती गई ईमानदारी, संघर्ष-भूमि जबलपुर के प्रति गहरा व अटूट लगाव एवं साहित्य में यथार्थ-अंकन का जुनून आदि शामिल हैं। परसाई के यहाँ पारंपरिक संस्कारों एवं मिथकों-पुराणों का वर्तमान से संगत बिठाए बगैर प्रवेश मना है। पारंपरिक रूढियों एवं जीर्ण-शीर्ण मान्यताओं को ध्वस्त करने के लिए वे मिथकों का ही सहारा लेते हैं, उन्हें धार देते हैं और उनका वार कर अपना मकसद पूरा करते हैं। परसाई का धर्म और राजनीति को देखने का एक खास नज़रिया है, जिसकी मुकम्मल पड़ताल इस पुस्तक में की गई है। जहाँ धर्म को वे मानवता से भिन्न नहीं मानते वहीं राजनीति को वर्तमान जीवन का अनिवार्य हिस्सा बताते हैं। उनकी नजर में प्रत्येक व्यक्ति किसी-न-किसी रूप में राजनीति से अवश्य जुड़ा है। न तो कोई बुद्धिजीवी और न ही कोई साहित्यकार अराजनीतिक हो सकता है। यहाँ लेखिका अमिता पांडेय ने अपनी प्रखर विश्लेषण क्षमता का परिचय देते हुए परसाई साहित्य के उन सभी महत्त्वपूर्ण बिन्दुओं को चिन्हित किया है जो परसाई की जीवन-दृष्टि को पढ़ने-समझने में निस्संदेह सहायक सिद्ध होंगे।

समीक्ष्य पुस्तक में व्यक्ति समाज और इतिहास की अवधारणा और इनकी परसाई-साहित्य में अविभाज्य मौजूदगी को क्रमशः अलग-अलग अध्यायों में विस्तार से विवेचित किया गया है। परसाई के यहाँ व्यक्ति का एक विशिष्ट अर्थ है। श्रद्धेय होकर यथास्थितिवाद का समर्थन उनकी दृष्टि में अव्यक्ति होने की स्थिति है। लेखिका के शब्दों में- ''..... जब परसाई विरोध के त्तव को व्यक्ति के चरित्र की पहचान बताते हैं तब उसके पीछे देकार्त का 'मैं सोचता हूँ इसलिए मैं हूँ' का सिद्धांत अवश्यंभावी रूप से कार्य करता है।.....बने बनाए धार्मिक सामाजिक जीवन-श्रेणियों के बीच हस्तक्षेप कर्ज करके ही वह आधुनिक सैद्धांतिक अर्थ में व्यक्ति होने की स्थिति निर्मित करता है। जहाँ ऐसा नहीं हो पाता वह स्थिति परसाई के लिए 'नॉन परसन होने की स्थिति है।" लेखिका ने यहाँ परसाई की जिस सम्यक दृष्टि को रेखांकित किया है उसमें मनुष्यता को बचाने वाला है। मनुष्यता की बुनियाद भी कर्म पर टिकी है। कर्मशीलता की रोशनी में ही व्यक्ति की पहचान संभव है। जीवन के रुक्ष धरातल पर 'सत्यमेव जयते' जैसी उक्तियाँ अर्थहीन साबित होने लगती हैं। मूलतः परसाई का जीवन-दर्शन उनके अनुभूत यथार्थ की आँच में तपकर तैयार हुआ है।यही कारण है कि उनके यहाँ जिस व्यक्ति या चरित्र को गढ़ा गया है वह समाज-निरपेक्ष नहीं है। परसाई को व्यक्ति के सभी प्रकार के पैंतरों और उसकी भूमिकाओं की गहरी समझ है, जिसे लेखिका द्वारा कुछ इस प्रकार से व्यक्त किया गया है- ''.....उनकी वर्ग-चेतना एकाएक उभरकर सामने आई वस्तु न थी। इसे उन्होंने अपने अध्ययन, श्रम और जनपक्षधरता के आधार पर अर्जित किया है। वे स्वयं को जनता से जुड़ा हुआ महसूस करते थे। जनता के बीच रहकर कार्य करते थे।..... वे व्यक्तियों को प्रवृत्तियों के रूप में पहचानकर उसका सटीक विश्लेषण करते थे। इस विश्लेषण से उनके साहित्य में जो रचनात्मक धार पैदा होती है, वही परसाई साहित्य को मूल्यवान बनाती है।'' लेखिका की दृष्टि में परसाई-साहित्य के 'व्यक्ति' का दुःख समाज का ही दुःख है। इसी प्रकार उसका 'मैं' में एकाकार होता दिखाई पड़ता है। यही 'मैं' शोषित-उपेक्षित जनता की बेवसी-लाचारी को वाणी देता दिखाई देता है।

व्यक्ति-दर्शन के साथ परसाई के समाज-दर्शन को भी इस पुस्तक में उतनी ही संजीदगी के साथ विश्लेषित किया गया है। परसाई का समाज-दर्शन मूलतः मार्क्सवाद पर ही निर्मित है।अपनी समझ और चेतना के अनुरूप ही ये दीन-दुखियों, शोषितों-उपेक्षितों के साथ खड़े दिखाई देते हैं। वस्तुतः परसाई स्वयं को मार्क्सवादियों की कतार में खडा करने में एक खास तरह की सावधानी बरत्ते हैं। उनके द्वारा रमाशंकर मिश्र को दिए गए एक इंटरव्यू के कुछ अंश समीक्ष्य पुस्तक में बड़े ही प्रासंगिक रूप में उद्धृत हुए हैं- ''मैं मार्क्सवादी हूँ। बेवकूफ मार्क्सवादी नहीं हूँ, इसीलिए अनजाने बौद्धिक ग़लती का सवाल मेरे

सामने है ही नहीं। मैं मार्क्स के इतिहास की व्याख्या मानता हूँ। वर्ग-संघर्ष में विश्वास करता हूँ। पर यह भी मानता हूँ कि मानव-नियति और आगे बढ़ेगी। निश्चित तौर से मैं वैज्ञानिक समाजवादी हूँ।" यहाँ परसाई की कोशिश मार्क्सवादी जड़ता से साफ-साफ बच निकलने की है। लेखिका के अनुसार जो आधुनिक चेतना परसाई के जीवन दर्शन व साहित्य में परिलक्षित होती है उसका विकास इतिहास और विज्ञान-बोध द्वारा हुआ है।

परसाई अपने समसामयिक समाज को देखकर बड़े हैरान थे जिसमें बड़े-बड़े ज्ञानी-विज्ञानी बुद्धिजीवी धर्म और कर्मकांड के जड़तापूर्ण कीचड़ में सिर से पैर तक सने हुए थे। उनका पूरा मानस ही मध्यकालीन संस्कारों से आच्छादित था। वे ऐसे ही मौकों व चरित्रों की तलाश में रहते थे और यही उनकी रचनात्मकता का 'रिसोर्स मटीरियल' बनता था। इन सभी पहलुओं की विधिवत् छानबीन यहाँ लेखिका द्वारा की गई है। राजनीति में निरंतर बढ़ रही पूँजीपतियों की जुगलबंदी किस प्रकार अपनी-अपनी तिजोरियाँ भरने में मशगूल थी। परसाई बड़ी हैरानगी से देख रहे थे। परसाई का लोकतंत्र के प्रति मोहभंग और तत्पश्चात् उनके अन्दर उत्पन्न क्षोभ, आक्रोश एवं आक्रामकता को लेखिका ने यहाँ जगह-जगह रेखांकित किया है। परसाई के राजनीति सम्बन्धी को स्पष्ट करने के लिए अमिता । ने 'पूछिए परसाई से' कॉलम से उ जवाब उद्धृत किया है- "लगाव से । मतलब? हर आदमी को राजनीति जा चाहिए। और सही राजनीति में शामि होना चाहिए। कोई आदमी गैरराजनीति नहीं हो सकता। एक जनपक्षीय राजनीति होती है जिसमें किसी पद और लाभ की इच्छा के बिना जनता के भले के लिए संघर्ष किया जाता है। वह न्याय और खतरे की राजनीति है, मगर इसके बिना कोई सामाजिक परिवर्तन नहीं होता।"

परसाई का अपने वर्तमान से एक बहुत अंतरंग रिश्ता था। समसामयिक विसंगतियों के प्रति क्षोभ और आक्रोश ही उनके लेखकीय सरोकार को सार्थकता प्रदान करते हैं, जिसे पुस्तक में कुछ इस प्रकार रेखांकित किया गया है- "परसाई अपनी रचनाओं में अपने समय के वर्तमान को बहुत गहरे पकड़ते हैं। अपने आस-पास से उनका जुड़ाव भी बहुत गहरा है। 'टू बी ए पोएट इज टू सी' की तर्ज पर वे कहते थे कि व्यंग्यकार का काम है देखना। वे अपने आस पास के जीवन को देखते हैं और उसकी जटिल परतों की पकड़ ही उनकी रचना का आधार बनती है।"

समीक्ष्य पुस्तक में परसाई के गहन इतिहास-बोध और उससे निर्मित रचनात्मक धार की पड़ताल की गई है। दरअसल देश की आज़ादी और परसाई का लेखकीय पदार्पण लगभग दोनों एक ही समय इतिहास में अपनी उपस्थिति दर्ज कराते हैं। यही कारण है कि उनके साहित्य में स्वाधीन भारत की आँखों में पलते सपने की चमक है, उनके दरकने की उदासी है और मोहभंग को झेलते हुए क्षोभ और आक्रोश तक पहुँचने तक का एक पूरा इतिहास मौजूद है। उनकी व्यंग्य-रचनाएँ अपने भीतर न केवल भारत बल्कि समूचे विश्व-पटल पर घटित घटनाओं के प्रभावजन्य ताने-बाने से तैयार हुई हैं। परसाई साहित्य में दर्ज इस ऐतिहासिकता को देखते हुए लेखिका ने इसे 'भावात्मक इतिहास' कहा है।

समग्रतः परसाई का साहित्य उनकी प्रतिबद्धता, लेखकीय साहस और आक्रामकता के कारण तंत्रभंजक बन गया है। उनके साहित्य की एक-एक परत को खोलकर उसमें उपस्थित महत्त्वपूर्ण बिन्दुओं को इस पुस्तक में चित्रित किया गया है। यहाँ लेखिका ने अपनी सूक्ष्म विश्लेषण क्षमता का परिचय देते हुए व्यक्ति समाज और इतिहास के अन्तःसम्बन्धों की सफल छानबीन की है। पुस्तक में प्रयुक्त भाषा विचारानुकूल एवं गवेषणात्मक है।

■■■

[illegible]

75, [illegible] अपार्टमेन्ट, पटपड़गंज,
दिल्ली-110092